

## अं कया नाट

अं कया नाट(परंपरागत असमी एकांकी नाटक) महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव की रचनात्मक प्रतिभा के वास्तवक सूचक हैं। ये नाटक, पूर्व आधुनिक काल के असमी कठपुतली नृत्य व ओझा-पाली के संयुक्त प्रारूप से निर्मित हैं और शंकरदेव द्वारा असम में प्रस्तुत संस्कृत नाटकों में अपनाई जाने वाली तकनीक और प्रक्रियाओं की तरह दूसरे रंगमंच संस्थानों में भी इन्हें अं कया नाट कहा जाता है।

यद्यपि महापुरुष शंकरदेव और माधवदेव द्वारा रचित नाटक लोकप्रिय स्वीकार्यता प्राप्त कर चुके हैं, लेकिन अं कया नाटशब्द शंकरदेव के जीवनकाल में मौजूद नहीं था। इस नामकरण को केवल आगे आने वाले समय में ही लोकप्रियता मिली। शंकरदेव और माधवदेव द्वारा लिखे गए नाटक, बारह ऐसे नाटक दस्तावेजों में पाये जाते हैं। कुछ चरित्र पुथी (जीवनियाँ) के अनुसार शंकरदेव ने 'चहना यात्रा' के निरूपण से नाट्य लेखन प्रारम्भ किया और आगे चलकर कुछ और रचनाएँ कीं। 'चहना-यात्रा' की कोई लिखत लिपि नहीं है और न ही उनके किसी अन्य नाटक की लिखत लिपि है। उनके द्वारा रचित 6 नाटक हैं- 'कालया दमन', 'पत्नी-प्रसाद', 'केल गोपाल', 'रुक्मिणी हरण', 'पारिजात हरण', और 'राम बिजय'। माधवदेव के नाटक हैं- 'चोर-धारा', 'पंपरा गुचुआ', 'भोजन बिहार', 'अर्जुन भंजन', 'भूम लेतोवा' और 'नृसंह यात्रा'। माधवदेव के इन 6 नाटकों को 'झूमरा' भी कहा जाता है।

अं कया नाट को अं कया भावना भी कहा जाता है। इन दोनों शब्दावलयों में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। नाट्यलेखक के दस्तावेज को इंगित करता है और भावना नाटक का प्रदर्शन है। दोनों शब्द परस्पर परिवर्तनीय हैं। भावना का प्रदर्शन प्रायः सत्र या गाँव के नामघर में किया जाता है। नामघर में दर्शकों के लिए पर्याप्त स्थान देने के लिए, बरामदे के दोनों भागों का विस्तार कर वैकल्पिक व्यवस्था (राभाघर) की जाती है। भावना के वास्तवक प्रदर्शन के पूर्व कर्मकांडों का एक लम्बा क्रम अपनाया जाता है। ऐसे कर्मकाण्डों की शुरुआत नाटक (नातमें ला) के प्रारम्भ में ही कम से कम एक रात पहले हो जाती है। उद्घाटन कर्मकाण्ड नामकीर्तन और नामघर में सम्पूर्ण नाटक के पाठन से निर्मित होता है। बड़ी संख्या में लोग समारोह में भाग लेते हैं। तब नाटक का पूर्वाभ्यास प्रारम्भ होता है। प्रतिदिन एक कलाकार अपने प्रदर्शन के लिए आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए

सरई (दालों और चने से भरी तश्तरी) का प्रस्ताव करता है। पूर्व दिवस को 'बराखरा' (मुख्य पूर्वाभ्यास) कहा जाता है जिसमें सम्पूर्ण नाटक का पूर्ण और अंतिम पूर्वाभ्यास मंचित किया जाता है। जो पुनः गाँव के वयो-वृद्ध लोगों सहित बड़ी भीड़ का साक्षी बनता है तथा जो कलाकारों को छोटे-मोटे सुधारों के संबंध में सलाह देते हैं। अंतिम तैयारी को मूर्तरूप देने के लिए राभाघर स्वयंसेवा, बैठने की व्यवस्था, प्रकाश, परिधान, सौन्दर्य-प्रसाधन, मुखौटों, पुतलों और अन्य पूरक वस्तुओं सहित सभी आवश्यक व्यवस्थाओं के संबंध में सहभा गयों, ग्रामीण युवाओं और जिम्मेदार व्यक्तियों को सौंपे जाने वाले कार्यों के संबंध में वचार-वमर्श किया जाता है।

ग्रामीण पर्यवेक्षकों द्वारा प्रार्थनाओं (नाम-कीर्तन) के सामूहिक जाप के साथ प्रदर्शन का दिन उत्सवपूर्ण होता है। मुख्य भूमिका निभाने वाले व्यक्ति व्रत रखते हैं और बाधा-रहित प्रदर्शन तथा कसी घटाव या जुड़ाव हेतु पत्र जमघट का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

### एकाकी नाटकों के लक्षण:

सभी एकाकी नाटकों में कुछ सामान्य और समान लक्षण पाए जाते हैं, जो निम्नलिखित हैं:

#### (i) सूत्रधार (वार्तालापी) का प्रभुत्व:

सूत्रधार अंकन नाट्यमें पर्याप्त रूप से प्रभावशाली भूमिका निभाता है। अभिनय के माध्यम से असम के लोगों के आध्यात्मिक स्तर को ऊंचा उठाने, समाज के सभी वर्गों के बीच भगवान कृष्ण की भक्ति के आदर्शों का प्रसार करने तथा भावना(नाटक) की भूमिका को केवल लोगों के मनोरंजन के स्रोत तक सीमित न रखने के लिए शंकरदेव ने अपनी काल्पनिक शक्ति के अनुसार सूत्रधार को प्रस्तुत किया। सूत्रधार की भूमिका को आमुख(पूर्वरंग) तक सीमित रखने के बजाय वे इस भूमिका का प्रयोग सम्पूर्ण नाटक के पात्रों के बीच समन्वय स्थापित करने तथा नाटक और इसके दर्शकों के बीच कड़ी के रूप में करते हैं। इसके अतिरिक्त कहानी के समय और स्थान के अनुसार, सूत्रधार का प्रयोग नाटक के अबाध निष्पादन को सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है। शंकरदेव ने इस पात्र को नाटक के निर्देशक के रूप में भी प्रस्तुत किया है। श्रोताओं के सम्मुख नाटक के भावों की उद्घोषणा के अतिरिक्त, आमुख के दौरान सूत्रधार गाते हुए नर्तक तथा एक प्रशंसक के रूप में भी कार्य करता है।

अं कया भावना में सूत्रधार द्वारा निभाए गए भाग में मुख्यतः निम्न ल खत पहलू शा मल होते हैं:

- (1) नंदी: यह देवता या राजा की प्रशंसा में गायन से संबन्धित है जो क नाटक का प्रमुख चरित्र होता है।
- (2) उद्घोषक: संगी(एक सहायक चरित्र) से वार्तालाप के दौरान उसके द्वारा दर्शकों के सम्मुख नाटक के शीर्षक और उसके सारांश की घोषणा की जाती है।
- (3) वह नाचते और गाते हुए, श्रोताओं के सम्मुख नायक और अन्य पात्रों को प्रस्तुत करता है, जब वे मंच पर आते हैं।
- (4) वह श्रोताओं के सम्मुख नाटक के दृश्यों की व्याख्या करता है जिससे उनका क्रयान्वयन क्रमवार तथा बिना कसी रुकावट के हो सके। इस प्र क्रया में वह श्लोकों का संस्कृत में पाठ करता है, ब्रजवाली में गाता है और प्रार्थना तथा काफी आकर्षक कन्तु गंभीर तरीके से ववरण को बयान करता है। ले कन वह चरित्रों के व्यक्तिगत दुख और सुख से संबन्धित गीत नहीं गाता है।
- (5) जैसा क आधुनिक नाटकों में अनुबोधक द्वारा कया जाता है, सूत्रधार उस समय का संकेत देता है जब एक पात्र को मंच पर अपना संवाद प्रस्तुत करना होता है।
- (6) वह उन दृश्यों व घटनाओं का ववरण देता है जो मंच पर प्रद र्शत नहीं कए जा सकते जिससे श्रोताओं को ऐसी घटनाओं के बारे में स्पष्ट अनुमान मल सके।
- (7) वह नाटक के अंत में मुक्ति मंगल भाटिमा(छंद के रूप में समापन प्रार्थना) के गायन में कलाकारों के सम्पूर्ण समूह का नेतृत्व करता है।

(ii) काव्यात्मक गीतों, श्लोकों तथा प्रार्थनाओं की प्रचुरता:

अं कया नाट में गीत, नृत्य और संगीत प्रचुरता में मलते हैं । ऐसे नाटकों का मंचन केवल इन सभी घटकों के समन्वित प्रदर्शन से ही पूर्ण होता है। शास्त्रीय रागों पर आधारित गीत प्रारम्भ से अंत तक मलते हैं। चरित्रों के अंगों की शारीरिक भाव-भं गमा ऐसी चीजों और क्रयाओं को इं गत करने के लए की जाती है जो मंच पर प्रद र्शत नहीं कए जा सकते। भेटिमा (एक प्रकार का भक्ति और प्रशंसा गीत) के समान, प्रचलन में गीत भी एक प्रकार के वाचन हैं। अधकांश अवसरों पर, ऐसे गीत और वाचन नृत्य के साथ होते हैं। इससे यह निश्चित है क अं कया

नाटकका मंचन नृत्य के बिना कभी भी पूर्ण नहीं माना जाता है। यह कहना अनावश्यक है कि ऐसे गीत व नृत्य हमें शा संगीत वाद्ययंत्रों के साथ होते हैं।

सूत्रधार के अतिरिक्त अन्य चरित्र भी केवल नृत्य की मुद्रा में मंच पर आते हैं। शंकरदेव द्वारा एक सत वाद्ययंत्र जैसे खोल(लंबे आकार की ड्रम), और ताल, नृत्य के लिए प्रयोग किए गए और परिणामस्वरूप अंकक्या नाटके एकीकृत भाग बन गए।

केवल आमुख तथा समापन भाग ही नहीं, बल्कि नाटक की सम्पूर्ण प्रक्रियाएँ भी काव्यात्मक गीतों से आगे बढ़ती हैं। दर्शक दृश्यों को आसानी से समझ सकते हैं, यद्यपि संवाद छोड़-छोड़कर भी दिये जाएँ तो भी उन्हें नाटक के भाव को समझने में कोई कठिनाई नहीं होती, और उसी तरह व भन्न चरण जिन के माध्यम से कोई चरित्र अभिनय करता है; मानसक अवस्था और अन्य संबन्धित स्तर जिनसे होकर कलाकार नाटक के अंत की ओर बढ़ते हैं। नाटक के दौरान आने वाली सभी घटनाओं को प्रारम्भ में ही श्लोकों और गीतों के माध्यम से इंगित कर दिया जाता है, जिन्हें लेखक दोहराना चाहता है। नाटक के दौरान भी, गीत संकटपूर्ण और भावनात्मक क्षणों को प्रदर्शित करने के लिए प्रस्तुत किए जाते हैं, जिनसे होकर चरित्रों को गुजरना पड़ता है।

अंकक्या नाट में चार प्रकार के गीत होते हैं:

(i) भक्तिमय- जैसे भेटिमा

(ii) संगीत के प्रकार- जैसे राग और ताल जिसमें गीत प्रस्तुत किया जाता है

(iii) व्याख्यात्मक तुकबंदी और मात्रिक प्रार्थनाएँ (चपाया) और

(iv) उनकी भौतिक बनावट, भाव-भंगमा और हरकतों की व्याख्या करते हुए चरित्रों के मंच पर प्रवेश के दौरान प्रस्तुत

## गीत

इन गीतों का साहित्यिक महत्त्व इनके संगीतात्मक मूल्य से बिलकुल भी कम नहीं है। ध्यानशीलता, अनुप्रास अलंकार, अलंकरण, तुकबंदी, अलंकार और सुखद ववरण व धारणाओं को उत्तेजित करने वाले वचार ऐसे गीतों में घुले- मले होते हैं जो वास्तव में उन्हें मधुर बनाते हैं। वे वस्तुओं और परिस्थितियों का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत करते हैं जिनका चित्रण करने के लिए इन गीतों का प्रयोग किया जाता है।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि ऐसे सभी दृश्य, घटनाएँ, परिस्थितियाँ और घटनाओं का स्थान जिनका प्रदर्शन मंच पर नहीं किया जा सकता, वे दर्शकों को सही रूप से समझाने के लिए गीतों और भाव-भंगमाओं द्वारा व्याख्या हेतु सूत्रधार के लिए छोड़ दिए जाते हैं। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि ब्रजवाली का प्रयोग भी अंकन नाटका अन्य व शष्ट तत्व है। वास्तव में नाटक के दौरान ब्रजवाली का प्रयोग केवल शंकरदेव द्वारा रचित नाटकों में ही पाया जाता है। शंकरदेव के बाद, इसका प्रयोग कम होना प्रारम्भ हो गया। यहाँ तक कि माधवदेव द्वारा रचित नाटकों में भी आम बोल-चाल की भाषा के प्रयोग ने काफी हद तक ब्रजवाली को बाहर कर दिया।

### (iii) ब्रजवाली भाषा का प्रयोग:

अन्य व शष्ट लक्षण अंकन नाटमें ब्रजवाली भाषा का प्रयोग है। जब कि इस भाषा को असमी में 'ब्रजवाली' कहा जाता है, बंगाली में इसके समान एक भाषा 'ब्रज बुली' नाम से जानी जाती है किन्तु ये समरूप नहीं हैं। यह 14वीं और 15 वीं शताब्दी के दौरान मथला क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा के रूप में प्रचलित थी। मध्ययुगीन काल में वैष्णव कवियों ने अपने आम बोल-चाल की भाषा के शब्द भी जोड़े और यहाँ-वहाँ उन शब्दों का रूप बदल दिए जो कि वदयापति ने अपनी पुस्तक में प्रयुक्त किए थे, कि वयों ने परवर्ती समय में इस भाषा की नींव रखी। जैसा कि बौद्धों द्वारा प्रयुक्त पाली के वषय में हुआ, जो कि एक व शष्ट साहित्यिक रूप या कसी क्षेत्र विशेष की भाषा नहीं है, किन्तु सभी वर्ग के लोगों द्वारा समझने के लिए बनाई गयी थी, वैसा ही ब्रजवाली के मामले में भी हुआ। पुनः, जैसे कि पाली, जिसके निर्माण का आधार मगध क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा थी, जिसमें अन्य क्षेत्रों में बोले जाने वाले शब्दों को भी शामिल करने के लिए आवश्यक परिवर्तन किए गए, ब्रजवाली भाषा का निर्माण भी असमी भाषा

के वाणीमय और ल खत अ भव्यव्यक्ति के प्रकार और तरीके में मै थली और अवह ी शब्दों के मश्रण से हुआ था। यद्यपि, महापुरुष द्वारा अपने लेखों में प्रयुक्त ब्रजवाली भाषा में भोजपुरी, अवधी और बृजभाषा(यूपी के पश्चिमी भागों में हिन्दी का स्वरूप) का प्रभाव भी देखा गया है। इसी तरह अं कया नाटमें प्रयोग कए गए क्रया, क्रया-वशेषण और सर्वनाम मै थली, भोजपुरी, अवधी और बृजभाषा में भी कुछ भन्नताओं के साथ पाए जाते हैं। उदाहरण के लए हम 'कबहु', 'याकर', 'यैसे', 'कैसे', 'यासु', 'मोही', 'होई' जैसे शब्दों को इंगत कर सकते हैं, जो क मै थली, अवधी और बृजभाषा में भी पाए जाते हैं। यह महापुरुष के द्वारा इन क्षेत्रों में वर्षों लंबे तीर्थाटन के प्रभाव के परिणामस्वरूप हो सकता है। निम्न ल खत शब्दशः उद्धृत वाक्य से असमी ब्रजवाली भाषा और मै थली के मश्रण की व वधता का एक अनुमान मलेगा:

[ हे ईश्वर, हमारे पति आप की ठोकर के कारण मरने वाले हैं। कृपया एक बार उन्हें क्षमा कर दीजिये। वो आपके समक्ष एक छोटी सी मक्खी हैं, उन्हें मारकर आपको कौन सी खुशी प्राप्त हो जाएगी? उन्हें पर्याप्त दण्ड मल चुका है।]

पुनः, [ काफी प्रायश्चित के बाद और ईश्वर के आशीर्वाद से, मैंने कृष्ण को इस अधेड़ उम्र में अपने पुत्र के रूप में पाया। वह पुत्र जो मुझे प्राणों से भी प्यारा है, पेड़ गरने के कारण एक क्षण में मरने वाला था। वह मृत्यु से केवल दैवीय आशीर्वाद के कारण बच पाया। आप एक स्त्री क्यों बन गए? आप असाधारण व्यक्ति से भी खराब हैं; आप स्वयं अपने पुत्र को खाना चाहते हो! कृष्ण के स्थान पर मैं रा मांस खा लीजिए।]

#### (iv) अलंकारिक गद्य का प्रयोग:

अं कया नाट का चौथा व शष्ट लक्षण इसका छंदमय गद्य है। शंकरदेव के नाटकों में इसका प्रयोग असमी साहित्य में इस प्रकार के गद्य का प्रथम उदाहरण है। यद्यपि यह शुद्ध असमी गद्य रूप का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। असमी साहित्य का शुद्ध रूप अपने व्यवस्थित आकार में केवल बैकुंठनाथ भागवत भ ाचार्य (भ देव) के लेखन में मलता है, जो सम्पूर्ण गद्य लेखन के अकेले माध्यम बन गए। उत्तर भारतीय भाषाओं की तरह शायद महापुरुष शंकरदेव ने अपने नाटकों में गद्यात्मक संवादों का प्रयोग कया। वद्यापति तथा गो वंदा, उमापति

आदि जैसे मैं थली नाट्य लेखकों ने केवल मैं थली भाषा में ही रचना की जब क उन्होंने संवादों में संस्कृत या प्राकृत का प्रयोग किया। शंकरदेव ने क्षेत्रीय भाषाओं में संवादों की रचना कर के महत्वपूर्ण पाठ-प्रदर्शक लक्षणों का परिचय दिया है।

ले कन गद्य का यह रूप बोल-चाल के रूप से भन्न तरीके का अनुसरण करता है। इस कारण से, इसे केवल आलंकारिक या छंदमय रूप कहा जाना चाहिए। यहाँ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए क सूत्रधार और अन्य चरित्रों ने भी गद्य रूप में रचित होने के बावजूद अपने संवादों को अलंकारिक प्रारूप में प्रस्तुत किया। इन नाटकों में प्रयुक्त गद्यात्मक वाक्य, सुर के अनुसार शब्दों के क्षय के साथ स्वर- वज्ञान तथा अनुप्रास व पुनरानुप्रास के अधिक प्रयोग के बीच समन्वय ने एक भन्न प्रकार का गद्यात्मक रूप प्रस्तुत किया है जो क सामान्य तौर पर प्रयुक्त गद्य रूप से अत्यधिक भन्न है। नीचे दिए गए उद्धरण, नाटकों में मिलने वाले उपरि लखत व शष्ट कारकों के समन्वित अनुप्रयोग के उदाहरण हैं :

[ रुक्मिणी क भक्ति से प्रसन्न होकर, भगवान कृष्ण ने राजकुमारी के साथ कई प्रकार की प्रेम-लीलाएँ कीं और उसकी इच्छाओं को पूरी तरह से संतुष्ट किया। राजकुमारी ने ब्रह्मांड के ईश्वर के साथ जुड़ने के लिए बहुत ही सम्मानित और भाग्यशाली महसूस किया। उसने अपने मंदिर में सहस्रों नव-वक सत कमल और साथ ही इंद्र का सौभाग्य प्राप्त किया। वो हमें शा प्रसन्नतापूर्वक कृष्ण के चरण-कमलों में सेवा करती रही। ]

कहने की जरूरत नहीं क अंकया नाटका प्रमुख उद्देश्य भक्तिपूर्ण आदर्शों का प्रसार करना है। इसी लिए नाट्य-लेखकों ने अपने स्तर से अपने नाटकों में व भन्न कोणों से कृष्ण भक्ति पर जोर देने का सर्वोत्तम प्रयास किया। भक्तिपूर्ण आदर्श, अंकया नाटका एक अन्य लक्षण है जो भक्ति के मार्ग को आगे बढ़ाता है। नाटके सभी चरित्रों को दैवीय स्पर्श देने के लिए व शष्ट भाषा का प्रयोग किया जाता है। ब्रजवाली ने उस समय की बोल-चाल की भाषाओं द्वारा बनाए गए स्थान से अधिक उच्च स्थान बनाकर एक भन्न वातावरण की रचना की। यद्यपि वे इस पहलू पर जोर देने के मामले में स्थिर रहे परंतु लेखकों ने मनोरंजन के पहलू को भी नहीं नकारा। उन्होंने इसके भक्तिमय पहलू और मनोरंजनात्मक पहलू के बीच न्यायपूर्ण संतुलन बनाया है। और इस प्रकार एक ओर तो उन्होंने नाट्य-रचना के उच्च आदर्शों या साहित्यिक लक्षणों के बीच संतुलन बनाया है तथा दूसरी ओर धर्म का

प्रसार कया है। इस प्रकार अं कया नाटइसके परिणामस्वरूप असमी नाट्य-साहित्य के उच्चतम आदर्शों व उच्च स्तर का प्रतीक बन चुके हैं।

(v) संगीत और नृत्य :

पश्चिमी नाटकों की भांति अं कया नाटका उद्देश्य संवादों के माध्यम से अपने चरित्रों पर जोर देना नहीं है। उनका लक्ष्य न तो जीवन और न ही वश्व की रंग-बिरंगी तस्वीर प्रस्तुत करना है। उनका इरादा दर्शकों के मस्तिष्क में नृत्य, गीत और अभिनय के माध्यम से भक्ति भाव पैदा करना होता है, जो ईश्वर के व भन्न अवतारों में उनके द्वारा कए गए कार्यों को दर्शाता है। इस लए ये नाटक, वास्तवक नाटकीय स्वाद के ऊपर भक्ति भावनाओं को वरीयता देते हैं। नाटकीय असमंजस और स्वाद भक्ति भावना (भक्ति राग, अं कया नाटका प्रमुख लक्ष्य) पैदा करके, दर्शकों को आध्यात्मिक वातावरण उपलब्ध कराया जाता है। क्रयाशीलता और व भन्न चरित्रों के बीच संघर्ष का महत्व व वतीयक है। यद्यपि दैवीय कार्यों के प्रस्तुतीकरण और उन्हे दर्शकों के समझने योग्य और मनोरंजक बनाने के लए कुछ निश्चित चरित्रों की रचना आवश्यक है। इस प्र क्रया में ववाद और संघर्ष के कुछ निश्चित दृश्यों को नाटकों में जोड़ा गया है जिसके बिना दर्शकों को आकर्षित करना कठिन होता। चूंकि ऐसे संघर्षों और मतभेदों को बहुत अधिक महत्व नहीं दिया गया है, इस लए अं कया नाटगंभीर संघर्षों से लगभग रहित हैं। कुछ कस्मों का प्रत्यक्ष संघर्ष 'रुक्मिणी हरण', 'पारिजात हरण' और 'राम वजय'में मलता है लेकन ये उन नाटकों का एकीकृत भाग नहीं हैं। दूसरी तरफ, 'पत्नी प्रसाद', 'केल-गोपाल' और माधवदेव के 'झूमरों' में भी व्यावहारिक रूप से कोई संघर्ष या टकराव नहीं है। उन नाटकों में हमें मतभेद की केवल एक झलक मलती है। इस कारण से हम अं कया नाट में केवल नाटक के वाह्य रूप की ओर ध्यान देते हैं, जो कि जोवंत नाटकीय तत्वों का दुख है। भाषण या संवादों का व्याख्यात्मक सामंजस्य तथा गीतों की प्रचुरता एक ध्यानशील स्थिति पैदा कर सकती है लेकन साझा राष्ट्रीय वातावरण कभी नहीं।

पौराणिक कहानियों को अपने मूल रूप में बनाए रखने के लए जरूरी होते हुए भी, अं कया नाटके लेखकों ने, न तो चरित्रों की अलग पहचान और न ही परिस्थितियों की भन्नता के अनुसार उनकी प्रकृति को प्रस्तुत करने का

प्रयास किया। यद्यपि उनमें मानवीय प्रकृति और व्यवहार को देखा जा सकता है परंतु वे कभी भी मानव नहीं हैं: वे या तो देव हैं या दानव, यद्यपि कुछ कस्म की मानवीय प्रकृति व व्यवहार उनमें स्पष्ट है। इस लए नाटकों में चरित्र गत्यात्मक नहीं बल्कि स्थिर हैं। वैष्णव कवियों का स्पष्ट उद्देश्य भगवान कृष्ण के कार्यों का प्रसार करना और उनके वैभव को गाने और सुनने के लए लोगों को तैयार करना था। उनका उद्देश्य मुख्यतः दर्शकों के आनंद के लए भक्ति भावना और मानसिक स्थिति के प्रदर्शन करना था। उन कवियों का उद्देश्य लोगों के मनोरंजन के लए नाटकीय भावनाओं को मजबूत करना नहीं था। उन्होंने चरित्रों के चित्रण के महत्व और कहानी के वर्णन पर जोर नहीं दिया। यद्यपि अधिकांश नाट्य लेखकों ने अपनी मूल कहानियों के वर्णन से अलग, चरित्रों के चित्रण में पूरी स्वतन्त्रता लेने में संकोच किया फिर भी कुछ प्रतिभावन लेखक अपने पास उपलब्ध सीमा क्षेत्र के अंतर्गत चमकदार तरीके से अपने चरित्रों के चित्रण में सफल रहे। उदाहरण के लए शंकरदेव, जीवंत चरित्रों जैसे, सत्यभामा, नारद व परशुराम का चित्रण करने में सफल रहे जबकि माधवदेव ने बाल कृष्ण को उसी जीवंतता के साथ प्रदर्शित किया। मदनमंजरी, लीलावती, कनकवती आदि जैसे चरित्र जो सीता या रुक्मिणी के मंत्र हैं, तथा हरिदास, सुरभ, वेदानिधि विप्र आदि जैसे भाट, महापुरुष की स्वयं की रचनाएँ हैं।

## 2. शंकरदेव के नाटकों की विशेषता:

कुछ निश्चित विशेषताएँ समान रूप से महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव के नाटकों में मिलती हैं जो निम्नलिखित हैं:

(क) अधिकांश नाटक भागवत के दशवें भाग पर आधारित हैं। केवल 'राम वजय' ही रामायण पर आधारित है।

(ख) अधिकांश मामलों में उन्होंने अपने नाटकों की शुरुआत श्लोकों के जोड़े के साथ की; उनमें से अलंकार पर आधारित एक को 'सार्दूलवक्रीरिता' (एक प्रकार का शास्त्रीय अलंकार) कहा जाता है।

(ग) 'राम वजय' और 'रुक्मिणी हरण', जिसमें प्रत्येक में चार भोटिमा हैं, को छोड़कर उनके अधिकांश नाटकों में दो भोटिमा (ईश्वर की प्रशंसा के गीत) मिलते हैं।

(घ) उनके नाटकों की भाषा साहित्यिक सुंदरता से परिपूर्ण है। शंकरदेव ने छंदों के न्यायपूर्ण प्रयोग और जहां आवश्यक हो वहाँ स्थानीय स्पर्श के द्वारा इसे सर्वाधिक रोचक और मनोरंजक बना दिया।

(ङ) उनके नाटकों में कुछ मामलों में चरित्रों की समान व्याख्या और वातावरण देखने को मिलता है।

उदाहरण के लिए सीता और रुक्मिणी को लगभग समान रीति से वर्णित किया गया है।

(च) पुनः, उनके नाटकों में नायिका की सुंदरता की दृष्टि से राजाओं के अपने प्रतिद्वंद्वी राजाओं के प्रति व्यवहार में समानता मिलती है। ऐसे दृश्य 'राम वजय' और 'रुक्मिणी हरण' नाटकों में मिलते हैं।

(छ) शंकरदेव ने संस्कृत में रचित प्रशंसा गीतों में सामान्य तौर पर छोटे अलंकारिक छंदों का प्रयोग किया।

(ज) उन्होंने अपने नाटकों में भगवान कृष्ण ('राम वजय' में भगवान राम) का चित्रण नायक के रूप में किया, जहां उन्होंने नायकों के मानवीय गुणों पर जोर देने का प्रयास किया, जो अपने प्रकृतिक और अलौकिक कार्यों से मानव को आश्चर्यचकित कर देते हैं।

(झ) यद्यपि हमें शंकरदेव के नाटकों में यौन भावना, नायकत्व, भयावहता और त्रासदी जैसे तत्व मिलते हैं किन्तु मुख्यतया उन्होंने अपने नाटकीय कार्यों से केवल भक्ति भावना का प्रसार करने पर जोर लगाया। यद्यपि 'के ल गोपाल', 'रुक्मिणी हरण' और 'राम विजय' जैसे उनके नाटकों में यौन भावना का महत्वपूर्ण स्थान है लेकिन अंततः शंकरदेव ने इसे भक्ति भावना में परिवर्तित करने में सफलता पायी।

(ञ) उन्होंने नायक व नायिका के कामुक आकर्षण तथा उनके मिलन की व्याख्या के लिए ज्यादातर भाट कहे जाने वाले स्रोत को चरित्र में लिया। ऐसे चरित्रों को 'राम वजय' और 'रुक्मिणी हरण' नाटकों में प्रमुख भूमिका दी गयी है।

(ट) नाट्य गीतों के व शष्ट प्रभाव को स्वीकार किया जाना चाहिए जो कि प्राथमिक रूप से शंकरदेव के नाटकों के आकर्षण का प्रमुख कारण है। ऐसा प्रभाव 'के ल गोपाल' नाटक में अधिक सुस्पष्ट है।

### 3. संस्कृत नाटक और अं कया नाट :

अं कया नाट के प्रकार और उपयोग के वषय में चर्चा करते समय संस्कृत नाटकों की नाट्य परम्पराओं के साथ उनकी समानता और भन्नता को भी ध्यान रखा जाना चाहिए । इस परिप्रेक्ष्य में प्रख्यात लेखक कालीराम में ढी अपने संकलन 'अं कया नाट' व 'अंकावली के आमुख में वस्तार से उल्लेख किया । अँग्रेजी में ल खत इस पुस्तक के आमुख में संस्कृत नाटक और अं कया नाटके बीच पायी जाने वाली समानताओं को इंगत किया गया है । लेखक मेढी ने प्रमुख रूप से नाटकों वषय-वस्तु में पायी जाने वाली समानताओं का उल्लेख किया है । इसके अतिरिक्त, आमुख में उल्लिखत अ भनय और नृत्य के परिप्रेक्ष्य में, हम संत भरत मुनि द्वारा रचित 'नाट्य शास्त्र' में वहित आयामों को भी इंगत कर सकते हैं । इन आयामों का अनुसरण व भन्न क्षेत्रीय संस्थाओं जैसे, केरल के 'कथकली' और 'कुरिय म' तथा आंध्र प्रदेश व त मलनाडु के यक्षगान द्वारा किया जाता है । अपनी असाधारण कल्पना शक्ति के साथ शंकरदेव ने अपने नाटकों में ऐसी प्रस्तावनाओं को शामिल किया । गायन-वादन (संगीत वाद्य यंत्रों के साथ गीत) और व भन्न प्रकार के वाद्ययंत्रों को धारण करने वाली प्रस्तावनाओं को अं कया नाटका 'पूर्वारंग' कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त खोल (लंबे आकार की ड्रम), ताल, दाबा (बड़े प्रकार की ड्रम) आदि के साथ संयुक्त रूप से गायन-वादन स्वयं में एक महान नाट्य संस्था है ।

अपने आमुख के प्रारम्भ में लेखक मेढी ने संस्कृत नाटकों और अं कया नाटमें पाई जाने वाली प्रस्तावनाओं के बीच समानताओं का उल्लेख किया है। प्रस्तावना (पूर्वारंग) का तात्पर्य है वास्तविक नाटक के प्रारम्भ से पूर्व का कार्यक्रम । इसमें प्रत्याहार (मृदंग का वादन ), अवतरण (गायकों और वादकों की स्थिति ), आश्रवण्य (संगीत वाद्ययंत्रों का स्वर ), संगस्वादन (वाद्य यंत्रों के वादन के लिए तैयार करना ), असारिता ( स्वरों व वाद्ययंत्रों की धुन का परीक्षण ), स्तुति ( मंत्र ), चरित नृत्य (पूजा के साथ नृत्य व झंडे का फहराना) शामिल हैं, जिसका अनुसरण नंदी गीत (सूत्रधार के द्वारा प्रशंसा गीत)द्वारा किया जाता है। नंदीगीत से पूर्व का भाग 'पुरवारंग' (प्रस्तावना) कहा जाता है । असमी एकाकी नाटक के प्रारम्भ से पूर्व, संगीत वाद्य यंत्रों के वादन तथा व भन्न प्रकार के नृत्यों के प्रदर्शन जैसे सरु-धेमाली, बर- धेमाली, देव-धेमाली, नात- धेमाली तथा गुरु-धेमाली जिसमें से सभी संगीत व वाद्य यंत्रों के प्रदर्शन के व भन्न रूप हैं ,के द्वारा नाट्य वातावरण किया जाता है । तब सूत्रधार मंच

पर प्रवेश करता है और अपना नृत्य प्रारम्भ करता है । 'पूरबरंग' के बजाय धेमाली शब्द के प्रयोग को सावधानीपूर्वक ध्यान दिया जाना चाहिए । संगीतज्ञों द्वारा खोल (एक लंबे आकार का ड्रम) और ताल के वादन के साथ नृत्य के प्रदर्शन को धेमाली कहा जाता है, जिसका रूप कलाकारों के पद-कार्य, शारीरिक गति व धर्यों तथा हाथों की भाव-भंग गमाओं से निर्धारित होता है । धेमाली में नृत्य, गीतों को पीछे धकेल देते हैं । खोल (ड्रम पर प्रहार) पद-कार्य और ड्रम बजाने वाले (बायन) के हाथों की भाव- भंग गमा के अनुसार बदलता रहता है । चूंकि ये प्रस्तावनाएं नृत्य व भाव- भंग गमाओं के साथ प्रदर्शित की जाती हैं इस लए उन्हें धेमाली कहा जाता है, जिसका तात्पर्य है खेल। हमारी भाषा में रंग-धेमाली शब्द के प्रयोग को सभी के द्वारा आसानी से समझा जाता है। रंग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द रंगा से हुई है, जिसका तात्पर्य है अभिनय । संयुक्त शब्दों जैसे 'काज-कर्म', 'हाट-बाजार' आदि की तरह हमारी भाषा में धेमाली के साथ रंग शब्द को जोड़कर 'रंग-धेमाली' शब्द गढ़ा गया है । धेमाली की उत्पत्ति 'धाव' से हुई है जिसका अर्थ है गति व ध; इस लए इसे धेमाली कहा जाता है जिसका अर्थ है गति व ध या भाव-भंग गमा । हमें अंकया भावना की धेमाली में अभिनय नहीं मिलता है, लेकन चक्रीय रीति से प्रदर्शित नृत्यों में शारीरिक गति व धर्याँ और भाव-भंग गमाँ मिलती हैं । इस प्रकार, धेमाली शब्द का प्रयोग उचित ही प्रतीत होता है । उत्तर भारत में, होली उत्सव में प्रस्तुत नृत्य व गीतों को धमार या धमाल कहा जाता है । विशेष रूप से गाए गए गीतों का एक रूप जिसे 'गेय' कहा जाता है, को भी 'धमार' कहते हैं। लेकन 'अंकया भावना' में प्रदर्शित धेमाली के साथ उनके संबंध को स्थापित नहीं किया जा सकता है। संक्षेप में, धेमाली का तात्पर्य ऐसी क्रिया से है जो शारीरिक गति व ध और भाव-भंग गमाओं को प्रदर्शित करती है। उदाहरण के लए, बच्चों द्वारा खेले जाने वाले खेल में, उनकी दौड़ में हमें पर्याप्त शारीरिक गति व धर्यां मिलती हैं। अंकया भावना में, प्रत्येक चरण के बाद नंदी और भोतिमा के गायन के दौरान सूत्रधार के द्वारा परंपरागत रूप से नृत्य प्रस्तुत किया जाता है।

अंकया नाट्य पर संस्कृत नाटकों का प्रभाव नंदी के प्रदर्शन, सूत्रधार द्वारा गायन (प्रस्तावना के बाद) तथा प्रशंसा गीत के दौरान, यहाँ तक कि नाटक के निष्कर्ष में प्रदर्शित 'मुक्तिमंगलम' में भी देखा जा सकता है । संस्कृत नाटकों की तरह, असमी अंकया नाट्य में हमें दो नंदी श्लोक मिलते हैं, विशेष रूप से उनमें जो शंकरदेव द्वारा रचित हैं । पहले श्लोक में, भगवान कृष्ण (राम बिजय में भगवान राम) की स्तुति की जाती है जब कि दूसरे

में नाटक के भाव का संक्षेप सार प्रस्तुत किया जाता है। यह नंदी श्लोक नाटक में निहित आध्यात्मिक उद्देश्य को प्रतिबिम्बित करता है।

संस्कृत परम्पराओं व उपमा के साथ अं कया नाटका अन्य प्रमुख संयोजक सूत्रधार है। संस्कृत नाटकों और भरत मुनि के नाट्यशास्त्र की भाँति यह चरित्र अं कया नाटमें महत्वपूर्ण व प्रभावी भूमिका निभाता है। संस्कृत नाटकों की तरह, अं कया नाट में नाटक के भाव की व्याख्या सूत्रधार द्वारा नंदी गीत, भोटिमा और श्लोकों के माध्यम से दर्शक के सम्मुख की जाती है। ले कन अं कया नाटमें उसकी भूमिका के प्रस्तावना व उपसंहार तक सी मत रहने के वरुद्ध, संस्कृत नाटकों में घटनाओं के व्याख्याता के रूप में सूत्रधार प्रत्येक चरण से जुड़ा रहता है।

चाहे संस्कृत नाटकों के अनुसार हो या भक्ति के आदर्शों के प्रसार का व शष्ट उद्देश्य हो, जैसा भी मामला हो, शंकरदेव ने संस्कृत नाटकों में भरत बाक्य (भरत मुनि द्वारा दिया गया संदेश) की भाँति अपने नाटका समापन मुक्तिमंगलम के साथ किया। संस्कृत नाटकों में मुख्य चरित्र, दर्शकों के कुशल-मंगल की प्रार्थना करते हुए 'भरत बाक्य' का पाठ करता है, जब क अं कया नाटमें सूत्रधार वर्तमान व आगामी जन्म में संपूर्ण समाज के सभी लोगों के कल्याण के लए ईश्वर की अनुनय करने हेतु 'मुक्तिमंगल' के प्रस्तुतीकरण में कलाकारों के पूरे समूह का नेतृत्व करता है।

अं कया भावना के प्रदर्शन में भी, नाट्य लेखक भाव-भंग गमाओं, पोशाकों, व अन्य आवश्यक उपसाधनों (अहर्ष) का प्रयोग करते हैं तथा भक्तिमय अभिनय पर भी जोर देते हैं। यद्यपि साहित्यिक भावनाओं के सभी 9 रूप (नव-रस) व भन्न अं कया नाटों में मलते हैं, पर भी ऐसी सभी नाटअंततः केवल भक्ति भावना में मल जाती हैं।

नाट्य-शास्त्र के अनुसार, अभिनय चार तत्वों पर आधारित है जो हैं- शारीरिक गति व ध, वचारोत्तेजक भावनाओं को प्रकट करने वाली भाव-भंग गमाएँ, भाव-भंग गमाएँ जैसे मुस्कान, हँसी व आँसू; और 'अहर्ष' (पोशाक, सौन्दर्य प्रसाधन व श्रंगार आदि)। यद्यपि ये सभी चारों तत्व अं कया नाटमें भी होते हैं, वहाँ परिस्थिति व वचारों को व्यक्त करने के लए प्रतीकात्मक भाव-भंग गमाएँ नहीं मलती हैं। यद्यपि चरित्र, घटनाओं के वास्तविक सार को व्यक्त करने के लए भौतिक या शारीरिक गति व धियों का सहारा लेते हैं। ऐसी गति व धियों व भाव-भंग गमाओं का प्रयोग सूत्रधार के नृत्य में निःसंकोच मलता है।

ऐसे नाटकों में रंगों व मुखौटे के प्रयोग की महत्वपूर्ण भूमिका है। ऐसा प्रतीत होता है कि अंकिया भावना इस परिप्रेक्ष्य में नाट्य शास्त्र में उल्लिखित निर्देशों का कठोरतापूर्वक पालन करता है। संस्कृत नाटकों में, ऐसे दृश्य व घटनाएँ जिनका मंच पर प्रदर्शन करना संभव नहीं होता, उन्हें व्याख्यात्मक वर्णन से दर्शकों को सोंचने व समझने के लिए छोड़ दिया जाता है। अंकिया नाटकों में वे दृश्य जो मंच पर प्रदर्शन के योग्य नहीं होते, उन्हें सूत्रधार के लिए दर्शकों के सम्मुख व्याख्या व वर्णन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

जैसे संस्कृत नाटकों में, जहाँ संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत व इसके शब्दों के विकृत रूपों का भी प्रयोग किया जाता है, उसी तरह अंकिया नाटकों के लेखकों ने भी अधिकांश मामलों में असमी के अतिरिक्त संस्कृत व ब्रजवाली भाषा का प्रयोग करते हैं। अपने संस्कृत समकक्ष की भाँति, अंकिया नाटकों में भी छंदमय गद्य व गीतों का प्रयोग समान रूप से मिलता है जैसे नाटकों में मुख्यतः सूत्रधार के संवादों में स्वर्ग से आने वाली आवाजें सुनी जाती हैं, जहाँ प्रस्तावना में वह कहता है, "अकाशे देवा दुंदुभी बजता" (स्वर्ग से पवन धुनें सुनाई दे रही हैं)। कभी-कभी ऐसी आवाजें नाटक के मुख्य पाठ्यक्रम में भी पायी जाती हैं।

#### 4. सामाजिक-धार्मिक जीवन पर प्रभाव:

अंकिया भावना का मुख्य उद्देश्य सर्वशक्तिमान व देवी-देवताओं के गुणगान द्वारा दर्शकों को धार्मिक व भक्ति के पहलू की ओर आकृष्ट करना तथा दृश्य माध्यम द्वारा उनके कार्यों को प्रदर्शित करना है। द्वितीयक रूप से उनका लक्ष्य लोगों का मनोरंजन करना भी है। मध्यकालीन यूरोप में, मुख्यतः चर्च से संबन्धित कुछ रंगमंच संस्थाओं की स्थापना की गयी। वहाँ मंच पर कए गए नाटक एक-तरफा व धर्म उन्मुख थे। वे तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कए गए- रहस्यवादी नाटक, धार्मिक नाटक और नैतिक नाटक। नाटकों की प्रथम दो श्रेणियों में प्रभु ईसा मसीह व धर्मदूतों के रहस्यमय कार्यों को प्रदर्शित किया गया जबकि तीसरी श्रेणी में, मानव व्यक्तित्व व सकर्मकता तथा मस्तिष्क में उनके प्रति क्रिया व प्रति क्रिया को प्रदर्शित किया गया। प्रारम्भिक चरण में, चर्च ने इन्हें प्रशासनात्मक ढंग से नहीं लिया। रूढ़िवादी चर्च रोमन रंगमंच के पतन के प्रमुख कारण थे। लेकिन परिणामस्वरूप, यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से नहीं, अप्रत्यक्ष रूप से चर्च नरम पड़ गया और प्रभु ईसा मसीह व बाइबल

की उत्पत्ति से संबन्धित कहानियों पर आधारित नाटकों को चर्च परिसर के अंदर मंचन की अनुमति दे दी, ले कन चर्च के अंदर नहीं। इन रंगमंचीय प्रदर्शनों ने दर्शकों को उत्कृष्ट मनोरंजन उपलब्ध कराया और ईसाईयत के प्रसार में बहुत अ धक सहायता की। कालांतर में, चर्च के फादर ने ऐसे रंगमंचों के ऊपर अपनी पकड़ खोना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने चौराहों व सार्वजनिक स्थानों पर मंचन प्रारम्भ कर दिया। क्यों क चलायमान मंच पहियागा डियों पर और सज्जा-गृह इन गा डियों के नीचे निर्मत कए गए, इस लए ये रंगमंच दर्शकों के मनोरंजन का श्रोत थे। दर्शक मंच पर शैतान के अनुयायियों की डरावने मुखौटे के साथ उपस्थिति या सुंदर पंखों के साथ परियों को देखकर आश्चर्यच कत थे। परिणामस्वरूप कालांतर में इन रंगमंचीय संस्थाओं ने परंपरागत नाटकों को जन्म दिया।

असमी अं कया नाटभी मुख्यतः धा र्मक संस्था है। दर्शकों के मनोरंजन के अतिरिक्त भावना ने उनके मस्तिष्क को वैष्णव भागवत धर्म की ओर आकृष्ट कया। यद्य प यह संस्थान धा र्मक मत के प्रसार के एक माध्यम के रूप में प्रयोग कया गया, इस लए लेखकों ने उपयुक्त पोशाकों, पूरक वस्तुओं, साधनों और उनके पूर्ण रूप से त्रुटि-वहीन प्रस्तुतीकरण के लए आवश्यक सहायक व्यवस्था जैसे पहलुओं को कभी भी नजरंदाज नहीं कया। इस कारण से अं कया नाटको एक कलात्मक प्रस्तुतीकरण के रूप में बहुत अ धक प्रशंसा मली। साधन, पूरक वस्तुएँ, सौन्दर्य प्रसाधन, मुखौटों, पोशाकों व संगीत वाद्य-यंत्रों तथा नाटक के मंचन के लए अन्य आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन हेतु व भन्न स्थानों से कलाकार व कर्मकार आ रहे थे। आ र्थक अवसरों के लए जागरूकता पैदा करते हुए कर्मकारों का कौशल आगे आने वाली पीढ़ियों को हस्तगत कया गया। वर्तमान परिदृश्य में भी अं कया नाटके आस-पास वक सत शल्पकृतियाँ समाज के कुछ लोगों को आय का श्रोत उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार ये संस्था एक वास्त वक वंश-परम्परा के द्वारा समाज को निर्दे शत करने में सफल रही। इस संस्था पर आधारित गायन-बायन (वादक व गायक) के संगीत समूह गावों के गली-नुक्कड़ों पर उगने लगे और उन्होंने इन कलाओं का निय मत आधार पर प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार इन संस्थाओं के माध्यम से समाज के व भन्न वर्गों के बीच साहचर्यात्मक व मत्रवत संबंध पनपने लगे और लोग सहयोग व आपसी समझ की भावना से कार्य करने के लए प्रेरित हुए। शैतानी ताकतों के ऊपर नैतिकता की जीत के उल्लास तथा दैवीय शक्तियों के मंच पर प्रस्तुतीकरण के कारण लोग धर्म व ईश्वर में वश्वास की ओर झुके। इस प्रकार उन्होंने अपने आध्यात्मिक स्तर को बड़ी सीमा तक वस्तारित कया।

## 5. माधवदेव द्वारा रचित नाटक :

अपने गुरु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, महापुरुष माधवदेव ने 6 एकाकी नाटकों की रचना के लिए जाने जाते हैं। यद्यपि ऐसा संदेह किया जाता है कि कुछ उत्तरवर्ती लेखकों ने उनके नाम से कुछ और नाटक लिखे। आलोचक इस राय पर एकमत हैं कि 'चोर-धारा', 'पंपरागुचुआ', 'भोजन बेहार', 'अर्जुन भंजन' और 'भू मलेतोआ' नाटक निश्चित रूप से माधवदेव द्वारा रचे गए लेकिन कुछेक नाटक को अभी भी प्रमाणित नहीं किया जा सका है। बाद में लिखत कुछ जीवनियों के अनुसार माधवदेव ने 'रामयात्रा' और 'गोवर्धन यात्रा' की भी रचना की और उनके मंचन का भी क्रयान्वित किया। 'रामयात्रा' नाटक बहुत लम्बा था और मंचन के लिए ठीक था इस लिए 'कथा गुरु चरित' के उल्लेख के अनुसार इसे नष्ट का दिया गया। लेकिन, जीवनी 'गोवर्धन यात्रा' के भाग्य के बारे में मूक है। जैसा कि जीवनी में उल्लेख किया गया है कि 'वष्णु अता' के आग्रह के अनुपालन में माधवदेव ने 'नृसंह यात्रा' नाटक की रचना की और स्वयं मुख्य भूमिका निभाते हुए मंच पर इसका प्रदर्शन किया गया। यद्यपि इसकी बहुत अधिक जानकारी नहीं है कि क्या उन्होंने इस नाटक की स्वयं रचना की या इसे दूसरे लेखक ने किया और इसका मंचन किया, फिर भी यह मानना गलत नहीं होगा कि माधवदेव इस नाटक के वास्तविक लेखक थे। दैतारी ठाकुर द्वारा लिखत 'नृसंह यात्रा' की रचना माधवदेव योग के बाद ही की गई।

संदेहास्पद नाटकों में ना ही 'नंदी', ना तो श्लोक मध्य में या समापन भाग में मिलते हैं। लेकिन जो किसी भी प्रकार के संदेह से मुक्त थे, वे 'नंदी श्लोक' से शुरू हुए हैं। वास्तव में, नाटक को नंदी श्लोक से प्रारम्भ करने का परंपरागत अनुसरण वैसे ही किया गया जैसे कि संस्कृत नाटकों में। पुनः, 'भूषण हरण', 'रास झूमरा' और 'कोटोरा खेला' में राधा को मुख्य स्त्री चरित्र के रूप में चित्रित किया गया, यद्यपि महापुरुष के धार्मिक विश्वास में राधा का कोई स्थान नहीं था; न ही राधा और कृष्ण को एक साथ पूजने की कोई गुंजाइश थी। इस कारण से कुछ आलोचक महापुरुष द्वारा अपने नाटकों में राधा को स्थान देने के सिद्धान्त को नहीं मानते हैं। इन नाटकों की भाषा भी समय के अनुसार बहुत अधिक परिष्कृत नहीं है। यद्यपि उन नाटकों में पाए जाने वाले पाँच गीत माधवदेव की रचना के बोरगीतों में शामिल किए जाते हैं, किन्तु कई आलोचक अलग राय देते हैं। 'रास झूमरा' में नायिका के रूप में राधा

का चित्रण करते हुए रचनाकार ने प्रेम की यौन भावनाओं को प्रदर्शित किया है। चूंकि शंकरदेव इसी विषय पर पहले ही एक नाटक की रचना कर चुके थे, इस लिए माधवदेव द्वारा उसी भाव पर किसी अन्य नाटक के लेखन की संभावना दूर की कौड़ी लगती है। 'रास क्रया' की रचना करते समय शंकरदेव भागवत में पाए जाने वाले विवरण से वचन लेते नहीं हुए। जबकि 'रास झूमरा' 'रास क्रया' के विवरण को पूरी तरह प्रस्तुत नहीं करती है, जैसा कि भागवत में मिलता है, जहां राधा का चित्रण एक नायिका के रूप में नहीं किया गया है। 'कोटोरा खेला' नाटक में अंतिम दो गीत वास्तव में माधवदेव की रचना हैं; लेकिन पहले कुछ गीतों के लेखक के बारे में संदेह की पर्याप्त गुंजाइश है। नाटक की विषय-सामग्री भागवत से संबन्धित नहीं है, बल्कि 'दान खण्ड' और 'नौका खण्ड' आदि से ली गई प्रतीत होती है जो कि राधा और कृष्ण के मध्य प्रेम को दर्शाती है, जैसा कि बंगाल के गौड़ के वैष्णव लेखक द्वारा रचित 'श्रीकृष्ण कीर्तन' में निहित है।

## नाटकों का वर्गीकरण :

महापुरुष शंकरदेव द्वारा रचित नाटक 'यात्रा' या 'अं कया नात' के रूप में जाने जाते हैं लेकिन 'अर्जुन भंजन' को छोड़कर माधवदेव के अन्य नाटकों को 'झूमर' कहा जाता है। नाट्या यात्रा और झूमर के बीच में अंतर को नाटक के स्तर के आधार पर अर्जुन भंजन से अलग किया जा सकता है। इस नाटक में शंकरदेव के द्वारा रचित नाटकों की भांति माधवदेव एक सम्पूर्ण कहानी प्रस्तुत करते हैं। दूसरी तरफ माधवदेव द्वारा रचित 'चोर धारा', 'पंपरागुचुआ', 'भू मलेतोआ' और 'भोजन बेहार' एक पूर्ण कहानी का अभाव है। कहानी के एक भाग अथवा छोटी घटना पर आधारित ऐसे नाटकों को 'झूमर' कहा जाता है। 'संगीत दामोदर' नामक पुस्तक में झूमर का राग के रूप में उल्लेख है जो यौन भाव और इसके लक्षणों को चित्रित करती है: "प्रायः श्रंगार बहुल माधवका मधुरा मृदुह। एकैका झुमुरी लोके बर्णानादि निस्मेज्जिता।" वर्तमान समय के झारखंड के संथाल परगना में चोटल जनजाति की महिलाओं द्वारा किया जाने वाला नृत्य जो चक्रीय रीति में या एक दूसरे द्वारा अनुसरण से होता है, उसे 'झूमर' कहा जाता है। एक प्रकार का गीत 'झूमर' भी उत्तर भारत में मलता है, साथ ही एक नृत्य जिसे मथला में झुमुरी कहा जाता है। प्राचीन असमी साहित्य में आठ शब्दों की तुकबंदी का प्रयोग मलता है जिसमें प्रत्येक पंक्ति में आठ शब्द होते हैं, जिससे क पंक्तियों क लंबाई कम हो जाती है। संभवतः इसी कारण से, माधवदेव के छोटे नाटकों को 'झूमर' कहा जाता है। ऐसे गीतों में स्त्री चरित्रों क प्रभुता 'झूमर' में प्रमाणित है, या 'पादकल्पतरु' (बंगाली वैष्णव कवताओं के संग्रह) के वाक्यांश 'युवती युथा सतगायता झुमुरी' में झूमर का उल्लेख मलता है। इस तरह महिलाओं का झूमर नृत्य और झूमर गीतों के साथ अंतरंग संबंध है।

माधवदेव ने अपने जीवनकाल में, अपने किसी नाटक में, कभी 'झूमर' शब्द का प्रयोग नहीं किया। संभवतः 'रास झूमरा' के लेखक ने उनकी रचनाओं में इस शब्द का प्रयोग माधवदेव की मृत्यु के बाद किया। यह कुछ संदेह का वषय है क माधवदेव 'रास झूमरा' के लेखक थे अथवा नहीं। 'रास झूमरा' एक नृत्य के रूप में माजुली के कमलाबारी सत्र और गरमूर सत्र में अभी भी मंचित किया जाता है। 'झूमरा' शब्द का प्रयोग दैतारी ठाकुर द्वारा लिखित 'शंकरदेव और माधवदेव' नामक जीवनी में मलता है। सब कुछ जो कहा और किया गया है, फर भी, यह माना जा सकता है क 'झूमरा' नाम माधवदेव के बाद के काल में गढ़ा गया। शायद शब्द को 17वीं सदी के

बाद लोक प्रयत्न मली । महापुरुष शंकरदेव द्वारा रचित नाटक, उन नाटकों में अत्यधिक प्रत्यक्ष संघर्ष के साथ पुराणों से ली गई कथा-वस्तु पर आधारित हैं, यद्यपि ये आवश्यक रूप से बहुत अधिक गंभीर नहीं हैं । लेकिन माधवदेव द्वारा रचित नाटक ऐसी पूरी तरह से पौराणिक कहानियों व उप-कहानियों पर आधारित नहीं हैं । यद्यपि उनके नाटकों में संघर्ष की गुंजाइश बहुत कम है । ये नाटक मुख्य रूप से, व शष्ट समय पर बाल्यकाल के दौरान भगवान् कृष्ण द्वारा किए गए कुछ शरारतपूर्ण कार्यों पर आधारित हैं । ये बहुत छोटी अवधि के वृत्तान्त हैं । प्रत्येक नाटक विशेष स्थिति पर आधारित होता है जिसमें कहानी के विकास की गुंजाइश नहीं होती । ऐसे कारणों के कारण, इन नाटकों का नाटकीय संघर्ष तुलनात्मक रूप से हल्का व छिछला प्रतीत होता है ।

भावना का प्रदर्शन उनके आध्यात्मिक प्रयास में भागीदारों की संतुष्टि के साथ एक सामुदायिक कार्य है । महापुरुष शंकरदेव ने पूर्ण रूप से स्थानीय शिल्प व संस्कृति को वैष्णव वाद के आध्यात्मिक मार्ग पर लाकर असमी समाज की नींव डाली । अनुष्ठान के भक्ति व धार्मिक पहलू बिना किसी कठिन प्रयास की आवश्यकता के असम के ग्रामीणों के जीवन को पूर्ण बनाते हैं । पूर्वोत्तर भारत के महान नव-वैष्णव वाद आंदोलन ने अंकीय नाटके माध्यम से भारतीय शास्त्रीय वरासत में योगदान किया है ।